www.thearyasamaj.org

ओ३म्-सुप्रभा

वैदिक सभ्यता-संस्कृति तथा राष्ट्रीय एकता की पोषक पत्रिका

ओ३म् क्रतो स्मर ।

वर्ष-7, अंक-3 | नवम्बर 2013 | मार्गशीर्ष
सृष्टि संवत् 1960853114 | विक्रमी संवत् 2070 | दयानन्दाब्द 190

दीपावली

के शुभावसर पर

हार्दिक शुभकामनाएँ

सम्पादक

मूलचन्द गुप्त

ओम् प्रतिष्ठान, कुसुमालय, बी-1/27, रघुनगर, पंखा रोड, नई दिल्ली-110045

www.thearyasamaj.org

ओ३म्

ओ३म्-सुप्रभा

वैदिक सभ्यता-संस्कृति तथा राष्ट्रीय एकता की पोषक पत्रिका

* *परामर्श*

डॉ० धर्मपाल आर्य
(पूर्व कुलपति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार)
ए/एच-16, शालीमार बाग,
दिल्ली-110088
दूरभाष-011-27472014
011-27471776

* *सम्पादक*

मूलचन्द गुप्त
(पूर्व प्रधान आर्यसमाज दीवानहाल दिल्ली)

* *प्रकाशक*

मूलचन्द गुप्त,
अध्यक्ष, **ओम्-प्रतिष्ठान**
कुसुमालय, बी-1/27, रघुनगर,
पंखा रोड, नई दिल्ली-110045
दूरभाष-9650886070
011-25394083
ई-मेल-Ompratisthan@gmail.com

ओ३म्-सुप्रभा में प्रकाशित लेखों के सभी विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है । वे विचार लेखक के अपने हैं ।

प्रकाशक-मुद्रक-स्वामी-मूलचन्द गुप्त द्वारा सम्पादित, तथा वैदिक प्रेस, 995/51, गली नं० 17, कैलाशनगर, दिल्ली-31 (फोन-22081646) से मुद्रित कराकर, ओम् प्रतिष्ठान, कुसुमालय, बी-1/27, रघुनगर, पंखा रोड, नई दिल्ली- 45, से प्रकाशित किया । न्यायक्षेत्र-दिल्ली

उद्देश्य

✧ वैदिक सभ्यता, संस्कृति तथा राष्ट्रीय एकता का पोषण करना, वैदिक विचार-धारा के अनुसार मानव-निर्माण करना, समरस और समेकित समाज का संगठन करना, विश्व भर में सुख और शान्ति की स्थापना करने का प्रयास करना **ओम्-प्रतिष्ठान** का मुख्य उद्देश्य है ।

✧ इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए समय समय पर विभिन्न बहुआयामी गतिविधियों का संचालन किया जाएगा ।

✧ रचनात्मक और प्रेरक साहित्य का सृजन, प्रकाशन और प्रसारण का, इन गति-विधियों में प्रमुख स्थान होगा ।

✧ इस पत्रिका में समय-समय पर आध्यात्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, ऐतिहासिक, आर्थिक, नैतिक, वैश्विक चेतना जागृत करने से सम्बन्धित विषयों पर मौलिक लेख तथा समाचार प्रकाशित किए जायेंगे ।

✧ **ओ३म्** परमपिता परमात्मा का निज नाम है । परमात्मा इस सृष्टि का नियन्ता है । सृष्टि से सम्बन्धित सभी विषयों का इसमें समावेश किया जाएगा ।

✧ **ओ३म्-सुप्रभा** का प्रकाशन पूर्णतया निजी स्तर पर किया जा रहा है । उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति हेतु प्रति मास देश-विदेश के आर्य विद्वानों, लेखकों, उपदेशकों, कार्यकर्ताओं, प्रकाशकों एवं संस्थाओं को ओ३म्-सुप्रभा **निःशुल्क** भेजी जा रही है।

✧ लघु-पत्रिका के कारण, प्रकाशनार्थ लेख न भेजें ।

✧ सुधी पाठकों से निवेदन है कि वे अपने सुझाव भेजकर कृतार्थ करते रहें ।

www.thearyasamaj.org

ओ३म्-सुप्रभा

वैदिक सभ्यता-संस्कृति तथा राष्ट्रीय एकता की पोषक पत्रिका

रचना, स्थिति और प्रलय, कर्मों का फल जिस का विधान है ।
ओ३म् सुप्रभा ज्ञान अनुपम, सुरभित जिस से जन कुसुम प्राण है ।।

वर्ष–7, अंक–3 | नवम्बर 2013 | मार्गशीर्ष
सृष्टि संवत् 1960853114 | विक्रमी संवत् 2070 | दयानन्दाब्द 190

ओ३म्–महिमा

न वै देवा अश्नन्ति न पिबन्त्येत देवाऽमृतं दृष्ट्वा तृप्यन्ति।

—महात्मा नारायण स्वामी

अथ यच्चतुर्थममृतं तन्मरुत उपजीवन्ति सोमेन मुखेन न वै देवा अश्नन्ति न पिबन्त्येतदेवामृतं दृष्ट्वा तृप्यन्ति ॥

त एतदेव रूपमभिसंविशन्त्येतस्माद्रू पादुद्यन्ति ॥

स य एतदेवामृतं वेद मरुतामेवैको भूत्वा सोमेनैव मुखेनैतदेवामृतं दृष्ट्वा तृप्यति स एतदेव रूपमभिसंविशन्त्येतस्माद्रू पादुदेति ॥

स यावदादित्यः पश्चादुदेता पुरस्तादस्तमेता द्विस्ताव दुत्तरत उदेता दक्षिणतोऽस्तमेता मरुतामेव तावदाधिपत्यं स्वराज्यं पर्य्येता ॥

छान्दोग्य उपनिषद् 3.9.1-4

अर्थ–इसके बाद जो चौथा अमृत है उससे मरुत सोम मुख से जीते हैं निश्चय वे देव न खाते हैं न पीते हैं उसी अमृत को देखकर तृप्त होते हैं ॥

वे इसी रूप में सब ओर से प्रवेश करते और इसी रूप से उदय होते हैं ॥

सो जो कोई इस अमृत को जानता है वह मरुतों ही में एक होकर सोममुख से इसी अमृत को देखकर तृप्त होता है । वह इसी रूप में सब ओर से प्रविष्ट होता और इसी रूप से उदय होता है ॥

जितने काल सूर्य पश्चिम से उदय और पूर्व में अस्त होता रहता है, उससे दुगने काल तक उत्तर से उदय और दक्षिण को अस्त होता रहेगा उतने काल वह मरुतों के मध्य आधिपत्य स्वराज्य पाता है ॥ ●

www.thearyasamaj.org

ओ३म् जप बन्दे सिखाया था ऋषी* ने

–प्रो० सुन्दरलाल कथूरिया, डी० लिट्०

ओ३म् जप बन्दे सिखाया था ऋषी ने ।
ज्ञान का दीपक जलाया था ऋषी ने ॥
अंधविश्वासों का डेरा,
सो रहा था देश मेरा
था नहीं दिखता सवेरा,
दूर तक फैला अंधेरा,
वेद-सूरज से भगाया था ऋषी ने ।
ओ३म् जप बन्दे सिखाया था ऋषी ने ॥
दुर्गुणों ने देश घेरा,
मत-मतान्तर का बसेरा,
वेद-विद्या लुप्त-सी थी,
सत्य कोहरे में घनेरा,
चीर कोहरा सत्य दिखलाया था ऋषी ने ।
ओ३म् जप बन्दे सिखाया था ऋषी ने ॥
दुर्दशा थी नारियों की,
वेद पढ़ने की मनाही,
जाति-बंधन की वजह से,
हिन्दुओं की थी तबाही,
गुण-करम से जाति, बतलाया था ऋषी ने ।
ओ३म् जप बन्दे सिखाया था ऋषी ने ॥
यज्ञ-संस्कृति से जुड़ो तुम,
भोग-लिप्सा से हटो तुम,
स्वप्न अपने राज्य का हो,
वेद-मन्त्रों को पढ़ो तुम,
सत्यविद्या वेद में यह तथ्य समझाया ऋषी ने ।
ओ३म् जप बन्दे सिखाया था ऋषी ने ॥

B-3/79, जनकपुरी, नई दिल्ली-110058
चलभाष-09718479970

(* शुद्ध वर्तनी 'ऋषि' है, किन्तु यहाँ छन्द के आग्रह से सर्वत्र 'ऋषी' का प्रयोग किया गया है ।)

www.thearyasamaj.org

सम्पादकीय

दीपावली

इस मास में दीपावली है । दीपावली दीपों का उत्सव है । दीपावली कार्तिक मास की अमावस को मनाई जाती है । लोक जीवन में दीपावली के पर्व के सम्बन्ध में वह कथा प्रचलित है कि रावण वध के उपरान्त, जब अयोध्या में श्री रामचन्द्र जी का आगमन हुआ, उस समय अवधवासियों ने सर्वत्र दीपक जलाकर अपने हर्षोल्लास को अभिव्यक्त किया था । उसी उपलक्ष्य में दीपावली का पर्व प्रचलन में आया । गोवर्धन पूजा, आदि पर्व भी इसी के साथ आते हैं । भारतीय संस्कृति कृषि प्रधान रही है तथा गाय-बैल आदि पशु इसके आधार है अतः उनके प्रति कृतज्ञता अभिव्यक्त करने के लिए इस प्रकार के आयोजन किये जाते रहे हैं । भैया दूज का पर्व भाई-बहन के मिलन का दिन है यह पर्व भाई-बहन की दीर्घायु के लिए मनाया जाता है । इस पर्व का सम्बन्ध 'धन' से माना गया है । धन और धर्म का गहरा नाता है । धन तो कमाओ, पर उसे धार्मिक कार्यों में लगाओ । इसे धर्मानुसार प्राप्त करो तथा परोपकार के कार्यों में खर्च करो । अर्थ धर्म का मूल है । इसके बिना मानव जीवन संभव नहीं है और इस तरह जिसके जीवन में अर्थ नहीं है वह अपने कर्तव्यों का पालन करने में समर्थ नहीं हो सकता है ।-'कौटिल्य' अर्थ से तात्पर्य यहां 'लक्ष्य' से भी है । धन ही वह साधन है जिससे संसार में मान, सम्मान, प्रतिष्ठा की प्राप्ति होती है । यह सत्य है पर उसे सम्मान धन जोड़ने से नहीं, बांटने से मिलता है । धन को धर्म का उत्तम साधक कहा जाता है । दीपावली का दार्शनिक पक्ष भी है । दीपक प्रकाश का पुञ्ज है । उसकी लौ सदा ऊपर की ओर रहती है । ऊंचाई की ओर जाने का लक्ष्य ही प्राप्ति का आधार है । ऊपर जाती हुई लौ धुआं छोड़ती है अर्थात् कालिमा का परित्याग करती है 'दुरितानिपरासुवे' अतः अपने दुरितों को छोड़ दो । जब व्यक्ति प्रगति करता है अज्ञानता और मलिनता स्वयमेव दूर होने लगते हैं । दीपक का आधार होता है बाती । बाती को सहयोग मिलता है तेल का । तेल का आश्रय प्राप्त होता है, मिट्टी के उस छोटे से पात्र का जिसे दीपक कहा जाता है अतः हमारा आधार मिट्टी है । रुई का रंग सफेद होता है । निर्मलता और स्वच्छता, उससे ही निर्मलता और स्वच्छता सभी को अच्छी लगती है । सात्विकता का भी अपना महत्व होता है । उसको गूंथ कर बनाया जाता है । कामना और वासना पर नियन्त्रण रखने से ही सदाचार पनपता है । सदाचार का प्रकाश दूर-दूर तक फैलता है । तेल से तात्पर्य स्नेह से है । स्नेह और सदाचार का मिलन ही वैमनस्यता से परे रहने का भाव उत्पन्न करता है ।

www.thearyasamaj.org

मिट्टी कोमल होती है । कोमलता बड़े महत्व का गुण होता है । विनम्रता मनुष्यत्व का गुण है । आओ इस पर्व पर हम सद्‌भाव बढ़ायें, अज्ञान के अन्ध कार को दूर करें तथा सर्वत्र सत्य, ज्ञान का प्रचार प्रसार करें ।

महर्षि दयानन्द निर्वाण दिवस

आर्यसमाज के संस्थापक, मानव मूल्यों के उन्नायक, युग प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती का आभिर्भाव इस भारत भूमि पर उस समय हुआ था जब यह देश पराधीन था तथा यहां के लोग अनेक प्रकार के अन्धविश्वासों में जकड़ें थे । वे अपनी शक्तियों को महचानने में असमर्थ थे । महर्षि दयानन्द सरस्वती ने भारतीय जनमानस को झकझोरा और उन्हें परमात्मा की वाणी वेद से अवगत कराया । वेद सार्वभौम और सार्वकालिक है । उनमें मनुष्यमात्र के कल्याण की बात को सर्वोपरि माना गया है । ऋषिवर बहुमुखी प्रतिभा के स्वामी थे । वे भारत को स्वतन्त्र देखना चाहते थे । वे इस देश को सामाजिक कुरीतियों से मुक्त कराना चाहते थे । वे गरीबों, असहायों, दलितों को समानता का दर्जा दिलाना चाहते थे । वे गौ की रक्षा चाहते थे । उन्होंने स्त्री जाति को भी वेदाध्ययन का अधिकार दिए जाने के लिए सतत प्रयास किया। वे हिन्दी और संस्कृत के समर्थक थे । धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक सभी क्षेत्रों में उन्होंने सराहनीय कार्य किया । महर्षि दयानन्द सरस्वती का निर्वाण दीपावली के दिन हुआ था । हम प्रतिवर्ष उनका निर्वाण दिवस मनाते हैं । हमें चाहिए कि हम आत्मनिरीक्षण, आत्मपरीक्षण एवं आत्म विश्लेषण करें । हम मात्र दूसरों का विरोध ही न करें, अपितु ठोस और सकारात्मक कार्य करें । हम महर्षि के उपदेशों के अनुरूप 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' की दिशा में आगे बढ़े । हमारे कार्य व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व के लिए कल्याणकारी हों । जो हम अपने लिए चाहते हैं, वही सबके लिए चाहें ।

गोरक्षा आन्दोलन

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने धार्मिक, सांस्कृतिक और मानवीय आधार पर गोपालन और गोवध निषेध के कार्यक्रम पर विशेष बल दिया था । उन्होंने 'गोकरुणा निधि' पुस्तक लिखी और 'गोकृष्यादि रक्षिणी सभा' बनाई । उन्होंने गोरक्षा और गोवध निवारण के लिए बहुत यत्न किया । भारत वर्ष में स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् भी अभी तक पूर्ण 'गोवध-निषेध' नहीं हुआ है यहां पर 'गोरक्षा सत्याग्रह' भी किया गया । हमारा कर्तव्य है कि हम सामूहिक रूप से अपनी शक्ति के बल पर इस कार्य को पूर्णता प्रदान कराने के लिए परिश्रम करें ।

—सम्पादक

www.thearyasamaj.org

युग प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती

युग प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती को वेदोद्धारक, नारी जाति का सम्मान कराने वाला, अस्पृश्यता के कोढ़ को समाप्त कराने वाला, सामाजिक कुरीतियों को मिटाने वाला, दलितों को सामाजिक न्याय दिलाने वाला, देश की सुषुप्त आत्मा को जगाने वाला, गोरक्षा के लिए देशवासियों की भावनाओं को जगाने वाला, पराधीनता की श्रृंखलाओं को काटकर स्वाधीनता प्राप्ति की भावना जगाने वाला, स्वराज्य का मन्त्रदाता, स्वराजय की अवधारणा से परिचित कराने वाला माना जाता है। देश में सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक तथा आर्थिक क्षेत्र में स्वस्थ चिन्तन देने हेतु, उन्होंने आर्यसमाज, परोपकारिणी सभा तथा गोकृष्यादि रक्षिणी सभा की स्थापना की। वे बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी थे। उनके अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादि-भाष्यभूमिका तथा संस्कारविधि एवं अन्य ग्रन्थ उनके मौलिक एवं मानवीय चिन्तन के परिचायक हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती का जन्म मौरवी राज्य के अन्तर्गत टंकारा ग्राम में सद्गृहस्थ करसन जी तिवारी के यहां प्रथम सन्तान के रूप में फाल्गुन बदी दशमी संवत् 1881 (दक्षिणात्यों के अनुसार माघ बदी दशमी) तदनुसार 12 फरवरी 1824 को हुआ। उनका बचपन का नाम मूलशंकर था। उन्होंने शिवरात्रि के अवसर पर व्रत रखा परन्तु उन्हें वहां के अप्रत्याशित दृश्य को देखकर प्रतिमा पूजन से विरक्ति हो गई। वे घर से निकल पड़े और संन्यास ग्रहण करके देशाटन किया। सन् 1860 में वे स्वामी विरजानन्द की कुटी पर मथुरा में गए। वहां पर व्याकरण तथा अन्य ग्रन्थों का विशद अध्ययन किया। स्वामी विरजानन्द ने दीक्षान्त प्रवचन में उनको उपदेश दिया और आशा की कि वे तर्क आधारित एवं सृष्टिक्रमानुकूल सिद्धान्तों को सत्य मान कर वेदों तथा अन्यान्य ऋषिकृत ग्रन्थों में प्रदत्त शिक्षाओं का प्रचार करेंगे, साम्प्रदायिक संकीर्णता को समाप्त करके वैदिक धर्म के पुनरुत्थान में सहायक होंगे। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आजीवन गुरुवर की आज्ञा को शिरोधार्य करके वेद प्रचार किया तथा समाज के कल्याण के लिए कार्य किया। उन्होंने आर्यसमाज के नियमों का निर्माण करते समय भी इन्हीं सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, आत्मिक, चारित्रिक कल्याण की भावनाओं को सर्वोपरि रखा। उन्होंने हरिद्वार में तथा अन्य स्थानों पर पाखण्डों का खण्डन किया। काशी का शास्त्रार्थ उनके जीवन की एक महत्वपूर्ण घटना है। वे कलकत्ता तथा मुम्बई एवं देश के विभिन्न स्थानों पर अपनी विचारधारा को फैलाने में लगे रहे।

(शेष पृष्ठ 15 पर)

www.thearyasamaj.org

गोवर्धन के अवसर पर –

गो-सेवा का व्रत लें

[भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद द्वारा गोवर्धन दिवस, 9 नवम्बर, 1956 के अवसर पर नई दिल्ली से प्रसारित भाषण के कुछ अंश प्रस्तुत हैं । --सम्पादक]

भारतीय पंचांग में गोवर्धन एक महत्वपूर्ण दिन है जो प्रतिवर्ष हमें हमारी आर्थिक व्यवस्था में गो-धन के महत्व का स्मरण कराता है । देश के जीवन में गोधन के ऊंचे स्थान को ध्यान में रखकर ही हमारे पूर्वजों ने इस दिन को राष्ट्रीय पर्व के रूप में मनाने का निश्चय किया था । गोधन की पूजा प्राचीन काल से इस दिन की विशेषता रही है । दुर्भाग्य से कालान्तर में हम इस पर्व के वास्तविक उद्देश्य को भूल गये और गाय की पूजा-मात्र से सन्तुष्ट होने लगे। इस वर्ष के महत्व के विषय में जनता को ठीक रूप से अवगत कराने और पशुपालन में जनसाधारण की रुचि पैदा के उद्देश्य से स्वाधीनता के बाद गोपाष्टमी को राष्ट्रव्यापी उत्सव के रूप में मनाने का निश्चय किया गया ।

1950-51 के अनुमान के अनुसार गोधन के द्वारा राष्ट्र की आय 660 करोड़ रुपये थी । यही कारण है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत रखे गये विकास कार्यक्रम में पशुपालन और नस्ल-सुधार को इतना ऊंचा स्थान दिया गया है । जबकि पहली योजना में इस मद पर 22 करोड़ व्यय करने की व्यवस्था थी, दूसरी योजना में पशुपालन और दुग्धशाला आदि के लिए 56 करोड़ व्यय करने की व्यवस्था थी, दूसरी योजना में पशुपालन और दुग्धशाला आदि के लिए 56 करोड़ रुपये की राशि निर्धारित की गई हे । यदि हम देहातों में रहने वाली देश की अधिकांश जनता को पूर्ण लाभ पहुंचाना चाहते हैं तो हमें पशुपालन और पशुओं के नस्ल-सुधार के काम को अधिक महत्व देना पड़ेगा ।

साधारणतया हमारे देश में गाय को आदर की दृष्टि से देखा जाता है, किन्तु इस आदर का आधार धार्मिक भावना है, जीवन में गाय की व्यवहारिक उपादेयता नहीं । धार्मिक भावना से इसका समबन्ध जोड़ने में भी मुझे कोई हानि नहीं दिखाई देती, किन्तु केवल इसी विचार से गो-सेवा का व्रत लेना और व्यवहारिक उपयोगिता को कोई स्थान न देना प्राचीन परम्परा के लिए घातक है । यदि हम इस पर्व के मनाने को सार्थक करना चाहते हैं तो हमें गाय की देखरेख और पशुपालन को एक व्यवसाय का रूप देना होगा अथवा इसका आधार आर्थिक मानना होगा और इसकी व्यवस्था लोगों के आर्थिक कल्याण की दृष्टि से करनी होगी । भावुकता में बुद्धि का पुट मिलाने से हम पर्व की सार्थकता में ही वृद्धि नहीं करेंगे बल्कि अपनी धार्मिक भावना की भी अधिक रक्षा कर सकेंगे ।

www.thearyasamaj.org

हमारे देश के प्रायः सभी भागों में पिंजरापोल और गौशालाएं धर्मार्थ संस्थाओं के रूप में चलाई जाती है। इस कार्य में प्रायः आर्थिक दृष्टिकोण को स्थान नहीं दिया जाता। हमें इस कार्य-प्रणाली को बदलना होगा और गाय तथा दूसरे घरेलू पशुओं की देखरेख आदि के लिए हम जो कुछ भी करते हैं उसका आधार आर्थिक बनाना होगा। मैं नहीं समझता कि यह काम किसी भी प्रकार से असम्भव या कठिन है। हमें इसे वैज्ञानिक ढग से करना होगा जिससे सभी चीजों का पूर्ण उपयोग हो सके और कोई भी चीज नष्ट या व्यर्थ न जाने पाये। गो-धन से हमें जो चीजें प्राप्त होती हैं उनमें सबसे पहले बैल आते हैं, जो भार ढोने और हल जोतने के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं। खाद और बहुमूल्य चमड़े का साधन भी पशुधन ही है। लेकिन सबसे बढ़कर गाय से हमें दूध के रूप में पौष्टिक खाद्य प्राप्त होता है। इसलिए हमारा उद्देश्य गो-धन की उचित देखरेख और पशुओं की नस्ल में सुधार करने का होना चाहिए जिससे हमें सब चीजें उत्तम कोटि की और अधिक से अधिक मात्रा में प्राप्त हो सकें।

आवश्यकता इस बात की है कि खेती के साथ-साथ गोवंश की भी उन्नति होनी चाहिए क्योंकि हमारी खेती उसी पर निर्भर है। गाय हमको दूध, दही, घी, मक्खन इत्यादि के रूप में पुष्टिकर भोजन देती है। इसके अतिरिक्त खेतों के लिए अच्छी से अच्छी खाद देती है जिसको हम अपने अज्ञान से या तो बिल्कुल नष्ट कर देते हैं या उससे जितना लाभ उठा सकते हैं, नहीं उठाते। वह बछड़े देती है जो हल जोतते हैं और गाड़ियों को खींचते हैं। यहां तक कि मरने पर वह बहुमूल्य चमड़ा भी दे जाती हैं। मेरा विश्वास है कि यदि हम गो-पालन ठीक से करें तो एक बार फिर इस देश में दूध की नदियां बहने लग सकती हैं। इसके लिए कुछ रूढ़ियों को छोड़ना होगा और गाय के लिए समग्र सेवा-भाव को ग्रहण करना होगा, अर्थात् उसको अच्छा पुष्टिकर भोजन देने से लेकर नस्ल-सुधार और मरने पर उसके शरीर से जो कुछ भी लाभ उठाया जा सकता है उसको प्राप्त करने का पूरा प्रयत्न होना चाहिए। जब तक कृषि-सुधार और गोसंवर्धन के कार्य साथ-साथ नहीं किये जायेंगे तब तक खाद्य समस्या पूरी तरह हल नहीं हो सकेगी। खाद्यपदार्थों में अन्य आवश्यक है पर दूध, दही, घी, मक्खन इत्यादि अर्थात् गोरस भी किसी रूप में कम आवश्यक नहीं।

देश की कृषि अनुसन्धानशालाओं को जो खेती और पशुओं की नस्ल-सुधार आदि का काम बराबर कर रही हैं, उस काम के परिणामों का किसानों में पूरी तरह प्रचार करना चाहिए। तभी देश को इन वैज्ञानिक खोजों का पूरा-पूरा लाभ मिल सकता है। पश्चिमी देशों के परीक्षणों से खेती के क्षेत्र में इन अनुसन्धानों और वैज्ञानिक खोजों का महत्व और उत्पादन पर प्रभाव भली प्रकार प्रमाणित हो चुका है। ●

www.thearyasamaj.org

कविवर श्री भगवानदास आर्य रचित–

"दयानन्द सागर" (महाकाव्य) के कुछ अंश

ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो

कर विस्तृत नयन-दिव्य ज्योति बोले-"हे शक्तिमन्त ईश्वर ।
तेरी इच्छा है यही प्रबल, सचमुच तव-इच्छा है प्रभुवर ॥
तो तेरी इच्छा पूर्ण प्रभो ! की लीला सुखद प्रभू तूने",
फिर रोक प्राण, कर ओमजाप, कर दिये प्राण तन से बाहर ॥

निकले ज्योंही ऋषि-स्थूल प्राण, कर रहे शिष्य सब अश्रु-स्नान ।
रो-रोकर गीली करी धरा, रोते अनाथ बालक-समान ॥
ना पारावार क्लेश-दुख का, थी शोक निराशा-रैन रुदन,
हो गये विदीर्ण हृदय दुख से, ना थामे थमता हृदय-म्लान ॥

करते सब यत्न धरें धीरज, दिल टूट हुए टुकड़े शत-शत ।
कर रहे रुदन सब फूट-फूट, हो गये फूलकर नयन रक्त ॥
बंध गई घिग्घियां-व्याकुलता, छा रही सभी के चेहरों पर,
डूबे सब शोक-महासागर, तन-मन सब के थे क्षत-विक्षत ॥

गया डूब राष्ट्र का भाग्य-भानु, भगवान दयानन्द हुए अमर ।
था मास कार्त्तिक अमा-निशा, उन्निस सौ चालिस संवत्सर ॥
मंगल दिन, बजे शाम के छह, हो गये अस्त-रवि-दयानन्द,
छाया रजनी तम चहूं ओर, आ रहे तार अजमेर नगर ॥

छा गई निराशा आर्यजगत्, सर्वत्र हो गया शोक व्याप्त ।
रही पसर अंधेरी घोर निशा, हो गया सभी पर वज्रपात ॥
क्या करें, और क्या नहीं करें, ना रहा किसी को मार्ग सूझ,
झटका लग गया असहनीय, लग रहा हो गया सन्निपात ॥

छप गई खबर अखबारों में, दे स्याह हाशिया अगले दिन ।
स्तम्भ छपे दे शोक खबर, हो गया ऋषि स्वर्गारोहण ॥
हो रही सभायें जगह-जगह, कर रहे हानि का सब वर्णन,
थे अमरीका-योरुप तक भी, महर्षि निधन से शोक-मग्न ॥

दाह संस्कार

प्रतिपदा मिती शुक्ला कार्तिक, ऋषि-भक्त, शिष्य सब प्रेमीजन ।
उस ज्योतिहीन नर-पुंगव को, नहलाया करके भारी मन ॥
चाहें डालें जल ऋषि-तन पर, दिया भिगो अश्रुओं से ऋषि-शव,
मलदिये द्रव्य सुरभित तन पर, डाला देह पर चूरा चन्दन ॥

www.thearyasamaj.org

कर दिया सुवेष्टित वस्त्रों से, कर रहे सभी अन्तिम दर्शन ।
की शिविका पुष्पों से सज्जित, दिन के दस बजे चले सब जन ॥
श्री भागराम पण्डित संग सब, चलते शव-पीछे नंगे पग,
शव को कुछ पंजाबी सैनिक, निज कंधों पर कर रहे वहन ॥

श्री रामानंद-गोपाल गिरी, करते आगे श्रुति-मन्त्र पठन ।
हो द्वार आगरा से, चौकों - बाजारों का करते लंघन ॥
पहुंचे दक्षिण-दिशि नगरी के, बाहर, शिविका के साथ सभी,
किया पण्डित भागराम् जी ने, स्वर्गीय ऋषि का यश-वर्णन ॥

उपकार ओर उद्देश्य बता, दिया ऋषि-भक्तों को प्रोत्साहन ।
रुंध जाता कण्ठ बीच में ही, कर दिये विचार तदपि प्रकटन ॥
पुनि सुन्दरलाल रायबहादुर, कर कड़ा कलेजा किया कथन,
बह रहे नयन से अश्रु सतत, रुंध गया कण्ठ, रुक गया कथन ॥

दो मन चन्दन, दस मन पीपल, - समिधाओं से की चिता चयन ।
रो-रोकर अपने हृदय थाम, ऋषि-शव कर दिया चिता-अर्पण ॥
रामानंद और आत्मानंद, अग्नी-आधान किया विधिवत्,
होते ही ज्वाला का स्पर्श, घृत-सिंचित शव हो गया दहन ॥

था दाह-कुण्ड में पांच सेर, कर्पूर, डाल दिया घी चतु मन ।
केसर इक सेर, और डाली, कस्तूरी दो तोले उस क्षण ॥
आहुतियां चरु-घृत की पुष्कल, डाली स्वामी जी के शव पर,
धूं-धूं कर चिता जली गति से, सब देख रहे लाचार स्व-जन ॥

करके ऋषि-शव का दाह-कर्म, लौटे शोकातुर आर्य नगर ।
समझें निज को निःसार व्यर्थ, ना कार्य लगे कोई रुचिकर ॥
कर अस्थि-चयन स्वामी तन का, दिया गाड़ शाहपुराधीश बाग,
अन्नासागर तट के समीप, है स्थित पुष्कर के पथ पर ॥

डूबा भारत का जन-मानस, ऋषि बाद शोक के महासागर ।
थे क्षत-विक्षत सब देशभक्त, सब गये सुधारक कार्य बिसर ॥
हो गये दीन-दुर्बल अनाथ, अबला आवाज हो गई गुम,
पहुंचा चुपके से स्वर्ग-धाम, रहा गूंज अभी भी उसका स्वर ॥ ●

आर्य साहित्यसेवी विश्वकोश

दस खण्डों में प्रस्तावित 'आर्यसाहित्य सेवी विश्वकोश' का लेखन कार्य प्रगति पर है। सुविज्ञ पाठकों से विनम्र निवेदन है कि यदि उन्होंने अपना परिचय, चित्र तथा लेखन-कार्य का विवरण अभी तक नहीं भेजा है, तो कृपया अपना परिचय शीघ्र भेजें जिसमें नाम, चित्र, माता-पिता का नाम, पति/पत्नी का नाम, जन्मस्थान और जन्म तिथि (निधन स्थान और निधन तिथि केवल दिवंगत के लिए), जीवन के उल्लेखनीय प्रसंग, लेखन कार्य का विस्तृत परिचय आदि कृपया शीघ्र भेजें।

-सम्पादक

www.thearyasamaj.org

प्रबुद्ध साहित्य सर्जक लाला चतुरसेन गुप्त

–स्व० स्वामी सोमानन्द सरस्वती (पं० नरेन्द्र, हैदराबाद)

[स्वामी सोमानन्द सरस्वती (पं० नरेन्द्र) हैदराबाद आर्य सत्याग्रह के समय आर्य जागृति के सूत्रधार थे। आप पं० रामचन्द्र देहलवी से अत्यधिक प्रभावित थे। आपने स्वामी स्वतंत्रानन्द जी से उपदेशक विद्यालय लाहौर में शास्त्रों का अध्ययन किया था। आपकी हैदराबाद सत्याग्रह में अग्रणी भूमिका थी। आपने प्रंजाब में हिन्दी रक्षा आन्दोलन तथा गौरक्षा आन्दोलन में भी नेतृत्व प्रदान किया। आपने मथुरा में आयोजित 'दयानन्द दीक्षा शताब्दी' तथा अलवर में 'आर्य महासम्मेलन' की प्रबन्ध व्यवस्थाओं में महत्वपूर्ण योगदान किया था। आपने अनेक ग्रंथों का प्रणयन किया। आप सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के उपप्रधान रहे। आर्यसमाज के स्थापना शताब्दी समारोह में भी आपकी अग्रणी भूमिका थी। आप लाला चतुरसेन गुप्त के निकट संपर्क में रहे। इस लेख में आपने लाला जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को प्रस्तुत किया है। –सम्पादक]

वदनं प्रसाद सदनं सदयं हृदयं सुधा सुधो वाचः ।
कारणं परोपकरण येषां केषां न ते वन्द्याः ॥

जिनका मुख मंडल सदा प्रसन्नता से खिला हुआ है, हृदय में दया है, वाणी में अमृत छलकता है, जीवन का एक मात्र कार्य परोपकार ही है, ऐसे चारों गुण में सम्पत्ति वाले पुरुष किस के लिए वन्दनीय नहीं है ? अर्थात् सदा आदरणीय है।

स्वर्गीय लाला चतुरसेन जी पर संस्कृत काव्य का उपरोक्त श्लोक अक्षरशः घटता है।

आपादयस्यक आर्यसमाजी

लाला जी, सच्चे अर्थों में चलते फिरते आपादमस्यक ठोस, कर्मठ आर्य पुरुष थे। अपने प्रत्येक श्वास प्रश्वास द्वारा उन्होंने आर्यसमाज की ही सेवा की। ऐसा समर्पित जीवन और महर्षि दयानन्द के प्रति एकनिष्ठ व्यक्ति अब हम से जुदा हो गया है। आज इस महानुभाव के पुण्यस्मृति के अवसर पर मैं उनके प्रति अपनी विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करता हूं।

लाला जी के जीवन में कुछ अद्‌भुत विशेषताएं थीं। वह कभी रोष में नहीं आते थे। अत्यन्त विपरीत परिस्थिति में भी वह सदा मुस्कराते रहते थे। निर्भयता और स्पष्टवादिता उनके चरित्र के ज्वलन्त अंग थे।

पुस्तकों की दुकान : आग लगाने का प्रयास

स्वाध्याय, सत्संग, लगन, धर्मप्रेम और आत्मचिंतन द्वारा एक सामान्य व्यक्ति कहां तक उच्च पद पर पहुंच सकता है, ला० चतुरसेन जी का जीवन

www.thearyasamaj.org

इस का जीवन्त प्रमाण है । दिल्ली में फतहपुरी मार्केट में कपड़े की कोठी में नौकरी करते हुए भी लाला जी अपने पास के क्षेत्र में आर्यसमाज का ही प्रचार करते रहते थे । इस के बाद उन्होंने दरीबा कलां में पुस्तकों की दुकान खोल ली । वहां इन्होंने अपने स्वाध्याय और वैचारिक बल के आधार पर एक आर्यसमाजी के रूप में इतनी ख्याति प्राप्त कर ली कि दुकान पर सदा आर्य और सनातनी पंडितों का जमघट लगा रहता । वे अकेले उनके साथ शास्त्रार्थ शंका समाधान करते रहते । यह शास्त्रार्थ युग था । संस्कृत के विद्वान न होते हुए भी. लाला जी सूझ बूझ, युक्ति, तर्क के धनी और रामायण, महाभारत, पुराणों इत्यादि में पारंगत थे और तत्काल अपने कथ्य की पुष्टि में इन ग्रन्थों के प्रमाण उपस्थित कर पौराणिकों का मुंह बन्द कर देते थे ।

कुछ शरारती लोगों ने चिढ़कर लाला जी की दुकान को आग भी लगा दी थी, पर शीघ्र ही उस पर काबू पा लिया गया और विशेष क्षति होने से बचा लिया गया ।

चतुरसेन जी की प्रेरणा से दिल्ली में ऐतिहासिक शास्त्रार्थ

उस शास्त्रार्थ युग में 'वर्णाश्रम स्वराज्य संघ' की ओर से मन्दिरों में हरिजन प्रवेश का विरोध किया जा रहा था । दिल्ली के परेड मैदान में स्वामी शंकराचार्य के इसी सम्बन्ध में कई भाषण हुए । लाला चतुरसेन वहां जाते रहे। अन्तिम दिन उन्होंने पुराण और पौराणिक दृष्टि से किये गये वेद-शास्त्रों के भाष्य के प्रकाश में से बड़ी निर्भयता से कुछ प्रश्न किये । शंकराचार्य से कुछ उत्तर न बन पड़ा । सभा में खलबली मच गयी। 'वर्णाश्रम स्वराज्य संघ' की ओर से शास्त्रार्थ की चुनौती दी गयी । इस 'संघ' के महासम्मेलन के हेतु उस समय राजधानी में ३००० के लगभग दिग्गज पंडित उपस्थित थे । पर लाला जी ने बड़े साहस, आत्म विश्वास और निर्भयता का परिचय देते हुए इस चुनौती को तत्काल स्वीकार कर लिया । लाला रामगोपाल जी शालवाले (इस समय प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा) उस समय उत्साही आर्य युवक के रूप में चतुरसेन जी के निकट सम्पर्क में थे । दोनों ने एक जुट हो इस शास्त्रार्थ की व्यवस्था की । आर्यसमाज की ओर से विद्वद्वर, संस्कृत-अंग्रेजी के प्रगल्भ पंडित प्रख्यात आर्य विद्वान पं० व्यासदेव शास्त्री साहित्याचार्य एम०ए०, एल०एल०बी० को खड़ा किया गया । सनातन धर्म की ओर से पं० ब्रह्मदत्त शर्मा आगरे वाले थे । मध्यस्थ महामहोपाध्याय पं० गिरधर शर्मा चतुर्वेदी थे । पं० व्यासदेव जी के युक्ति प्रमाण प्राबल्य और घंटों तक अनवरत संस्कृत भाषण से १० हजार से अधिक उपस्थित जनता मंत्र मुग्ध हो गयी । चतुर्वेदी जी भी इससे बड़े प्रभावित हुए । अन्त में उन्होंने भी पं० व्यासदेव को ही विजयी घोषित किया ।

www.thearyasamaj.org

इस प्रकार लाला चतुरसेन जी के अद्वितीय आत्मविश्वास, वैदिक धर्म के प्रति अडिग श्रद्धा और आस्था, महर्षि दयानन्द के प्रति अविचल निष्ठा इत्यादि सुनहरे गुणों के परिणाम स्वरूप राजधानी में आर्यसमाज का सिक्का जम गया ।

शिव मन्दिर सत्याग्रह का नेतृत्व

चांदनी चौक में घंटाघर के पास एक छोटा शिव मन्दिर था । दिल्ली की मुस्लिम बाहुल्य पुलिस की शरारत और गोरे शासकों की मिलीभगत से इस शिव मन्दिर की मूर्ति उठा ली गयी और पवित्रता नष्ट की गयी । नगर के पौराणिक नेताओं के कान पर जूं तक न रेंगी । ला० रामगोपाल जी शालवाले और ला० चतुरसेन जी तक यह मामला अगले दिन तक पहुंचा । दोनों के नेतृत्व में तत्काल सत्याग्रह की घोषणा कर दी गयी । पं० व्यास देव जी ने भी अन्त तक साथ दिया और नेतृत्व भी किया । कुछ ही समय में न केवल दिल्ली अपितु समस्त देश में सरकार के विरुद्ध बवण्डर खड़ा हो गया । सरकार को अविलम्ब झुकना पड़ा । मन्दिर में पुनः मूर्ति का प्रतिष्ठान किया गया और साथ ही 'ओ३म्' ध्वज मन्दिर पर लहराया गया । लाला चतुरसेन जी ने दृढ़ आर्यसमाजी होते हुए भी हिन्दुत्व की रक्षा और हिन्दू जागरण की भावना से इस आन्दोलन को हाथ में लिया और उसे विजय मंडित किया ।

आर्यसमाज के सत्याग्रह आन्दोलनों में अग्रिम स्थान

आर्यसमाज द्वारा चलाये गये ''हैदराबाद सत्याग्रह'', ''सिन्ध में सत्यार्थप्रकाश पर पाबन्दी'', ''पंजाब में हिन्दी रक्षा आन्दोलन'' में भी ला० चतुरसेन प्रथम पंक्ति में ही सक्रिय रूप से रहे और अन्य सत्याग्रहियों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर विजय प्रयास में पूर्णतः सन्नद्ध रहे ।

प्रबुद्ध साहित्य सर्जक

इस बहुमुखी आन्दोलन और संघर्षमय जीवन के अतिरिक्त ला० चतुरसेन गुप्त आर्य साहित्य के प्रबुद्ध सर्जक तथा हिन्दी के नव दिशा प्रेरक लेखक थे । सब से पहले आप ने ही 'सम्पूर्ण महाभारत' का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित किया और इसी की बिक्री के लिए भारत के कई प्रदेशों की यात्रा की । पं० अखिलानन्द कृत 'दयानन्द दिग्विजय' के हिन्दी अनुवाद के अतिरिक्त लाला जी ने दर्जनों छोटी बड़ी पुस्तकें लिखीं । डा० राजेन्द्रप्रसाद के राष्ट्रपति काल में आपने राष्ट्रपति के नाम ११ प्रश्न पुस्तिका लिखी जिसे राष्ट्रपति ने आद्योपान्त पढ़कर सरकार का उस ओर ध्यान दिलाने का आश्वासन दिया । आपकी एक पुस्तिका ''मैं हंसूं या रोऊं'' बहुत प्रचलित हुई जिसमें हिन्दू जाति की दुर्दशा पर अपनी आन्तरिक वेदना भरी हुई थी ।

हिन्दुत्व राष्ट्र की प्रबल भावना :

लाला जी के अन्तस्थल में एक ओर हिन्दुजाति की कुम्भकरणी निद्रा,

www.thearyasamaj.org

अनेकता, जाति-पांति, सामाजिक कुरीतियों की दासता और निरन्तर हो रहे संख्या ह्रास, दूसरी ओर सरकार की धर्मनिरपेक्षता की मृग-मरिचिका की आड़ में मुस्लिम पुष्टिकरण और ईसाईयत के राष्ट्रघातक प्रचार को खुली छूट देने की दुर्नीति-इसके फलस्वरूप तीव्र पीड़ा, सन्ताप और वेदना हर दम रहती थी। अपनी बातचीत और जनसम्पर्क में वह सदा इसकी चर्चा करते थे।

व्यक्तिगत शुद्ध जीवन

लाला चतुरसेन जी का निजी जीवन, शुद्ध, सात्विक, परोपकार, पर-कातरता से आपूरित होता हुआ दृढ़ ईश्वरभक्त और महर्षि के प्रति अनन्य रूप से अर्पित था।

सार्वदेशिक सभा से चिरकालिक सम्बन्ध

सार्वदेशिक सभा के लाला जी आजीवन सदस्य थे। सार्वदेशिक सभा व अन्य किसी भी संस्था के लिए उनके अन्दर रत्ती भर भी पदलिप्सा नहीं थी। कई वर्षों से मासिक चले आ रहे "सार्वदेशिक" पत्र को साप्ताहिक रूप देने का साहसपूर्ण कदम आपकी प्रेरणा से ही उठाया गया। इसका एकमात्र श्रेय आपको ही है। ●

(पृष्ठ 7 का शेष)

10 अप्रैल 1875 को मुम्बई में उन्होंने आर्यसमाज की स्थापना की। संस्कृत के उद्‌भट विद्वान् महर्षि दयानन्द ने भारतीय अस्मिता के जागरण तथा सामाजिक कुरीतियों के निवारण के लिए आर्यभाषा हिन्दी को अपने व्याख्यानों तथा लेखन का माध्यम बनाया।

उन्होंने सतीप्रथा, बाल विवाह तथा बहुविवाह का सशक्त विरोध किया। उन्होंने विधवा विवाह के समर्थन में सशक्त आवाज उठाई। उन्होंने जन्मना जाति का विरोध किया तथा कर्मणा वर्णव्यवस्था का समर्थन किया। उन्होंने अन्धविश्वासों, कुसंस्कारों तथा पाखण्डों से भरी धार्मिक संकीर्णताओं का विरोध किया एवं समानता तथा सद्‌भाव के आधार पर नए समाज की नींव रखने का सुष्ठु प्रयास किया। उन्होंने 'स्त्रीशूद्रौ ना धीयताम्' का सशक्त विरोध किया था वेदमन्त्रों के आधार पर यह सिद्ध किया कि सभी को वेद ज्ञान प्राप्त करने का अधिकार है। वे धर्म प्रचारक के साथ-साथ स्वराज्य के पक्षधर तथा समाज सुधारक भी थे। उन्होंने सामाजिक न्याय, सामाजिक समरसता, भाषायी एकता, धार्मिक एकता, स्वाधीनता प्राप्ति, गोकृष्यादि रक्षा, कुरीति उन्मूलन, वेदोद्धार के लिए जो कार्य किया उसके आधार पर उन्हें नव-जागरण के अग्रणी नेताओं में सर्वोच्च स्थान दिया जाएगा। उनकी विचार-धारा आज सर्वत्र प्रतिफलित होती दिखाई दे रही है।

30 अक्तूबर सन् 1883, कार्तिक अमावस्या संवत् 1940, दीपावली के दिन सायंकाल को महर्षि दयानन्द सरस्वती का निधन हुआ। ●

www.thearyasamaj.org

आचार्या कमला स्नातिका

[स्त्री शिक्षा के सम्वर्धन के लिए जीवन समर्पित करने पर दृढ़-निश्चयी आचार्य कमला स्नातिका का जन्म उत्तर प्रदेश के मेरठ जनपद के जीतपुर नामक ग्राम में 10 अगस्त सन् 1942 को हुआ । परिवार का आर्य-संस्कारों पर अटूट विश्वास होने से ही आपको गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन से सम्बद्ध कन्या गुरुकुल सासनी में प्रवेश दिलाया गया । वहां से आपने शिरोमणि; आगरा विश्वविद्यालय के एम०ए० तथा मेरठ विश्वविद्यालय से बी०एड० की उपाधियाँ प्राप्त की थीं । 1962 में आपने कन्या गुरुकुल महाविद्यालय, हाथरस में अध्यापन कार्य शुरू किया तथा 1968 में आप महाविद्यालय की प्राचार्य बनीं ।

अध्यापन एवं गुरुकुल की सभी गतिविधियों का प्रबन्धन के साथ-साथ आपके लेख भी समय-समय पर पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं । गुरुकुल की संस्थापिका-संचालिका माता लक्ष्मी देवी तथा विख्यात शिक्षा शास्त्री कन्या गुरुकुल के कुलपति आचार्य महेन्द्र प्रताप शास्त्री के अभिनन्दन ग्रन्थों के प्रबन्धन-सम्पादन का गुरुतर भार आपने वहन किया था ।

आपका निधन 7 अक्तूबर 2013 को हुआ । हमारी विनित श्रद्धाञ्जलि । 1980 में प्रकाशित आपके लिख-"निरुक्त वेदाङ्ग की महत्ता" का एक अंश पाठकों के अवलोकनार्थ प्रस्तुत है । -सम्पादक]

निरुक्त वेदाङ्ग की महत्ता

वेदाध्ययन में निरुक्त वेदाङ्ग का अपना विशेष स्थान है । 'निरुक्तं श्रोतमुच्यते'-वेद शरीर में निरुक्त का स्थान कर्ण के समान है । जैसे किसी भी कार्य के उचित सम्पादन के लिए बात को अच्छी प्रकार सुनना आवश्यक है, उसी प्रकार वेदार्थ के लिए प्रत्येक शब्द की निरुक्ति और विवेचना आवश्यक होती है । अर्थ गाम्भीर्य को समझने में निरुक्त से बहुत सहायता मिलती है ।

साधारणतः निरुक्त को एक ग्रन्थ के रूप में माना जाता है परन्तु निरुक्त वेदाङ्ग एक शास्त्र है, एक पद्धति है, कोई ग्रन्थ विशेष नहीं, निरुक्त की पद्धति से वेदार्थ को समझने का प्रयत्न किया जाता है ।

निरुक्त का उद्देश्य

वर्णागमो वर्णविपर्ययश्च द्वौ चापरौ वर्णविकारणाशौ ।
धातोस्तदर्थातिश्येन योगस्तदुच्यते पञ्चविधं निरुक्तम् ।।

अर्थात् निरुक्त के ये पांच कार्य हैं-

(1) वर्णागम, (2) वर्ण विपर्यय, (3) वर्ण विकार, (4) वर्णनाश,

www.thearyasamaj.org

(5) धात्वर्थ सम्बन्ध । ये पांचों बातें व्याकरण वेदाङ्ग में भी होती हैं । अतः कुछ विचारकों की सम्मति में निरुक्त को भी व्याकरण के अन्तर्गत मानना चाहिए, परन्तु हम देखते हैं कि व्याकरण का उपयोग भाषा नियमों तक ही सीमित है जबकि निरुक्त में अर्थ पर विशेष बल दिया जाता है । इसलिए निरुक्त का व्याकरण से पृथक् अपना विशेष महत्व है ।

कुछ विद्वानों का मत है कि प्रातिशाख्यों में वैदिक व्याकरण की जो त्रुटियां रह गई थी उन्हें दूर करने के लिए निरुक्त-शास्त्र की रचना की गई, परन्तु ऐसा मानने से निरुक्त वेदाङ्ग की प्राचीनता और महत्ता कम हो जायेगी? वास्तव में वेदाङ्ग के रूप में निरुक्त की अपनी सत्ता है और उसका कार्यक्षेत्र महत्पूर्ण है । निरुक्त का अर्थ लिखते हुए एक विद्वान् ने लिखा है– **'निश्चित कथन जिसमें है वह निरुक्त है ।'** यह शब्द का वाच्यार्थ है । वास्तव में निरुक्त शब्द का प्रयोग उस वेदाङ्ग के लिए किया जाता है जिसमें वेदों के दुरूह शब्दों की व्याख्या की जाती है और व्याख्या के नियम, पद्धति आदि का विश्लेषण किया जाता है । इसी अर्थ को आधार मानकर विद्वानों ने निरुक्त शास्त्र पर ग्रन्थों की रचनाएं कीं । अतः यह स्पष्ट है कि निरुक्त का अर्थ रूढ़ बन गया है और उसे उसी रूप में लिया जाना चाहिए ।

वेद पदार्थ की उत्पत्ति, स्थिति और संहार का निर्वचन करना ही निरुक्त है । पदार्थ की निरुक्ति भी शब्द ब्रह्म और अर्थ ब्रह्म के भेद से दो प्रकार की होती है ।

वाक् की उन्मुग्ध अवस्था अनिरुक्त रहती है और उसी वाक् की उद्‌बुद्ध अवस्था निरुक्त कही जायेगी । यही स्थिति पद के साथ भी होती है, अर्थात् पद भी उन्मुग्धावस्था में अनिरुक्त और उद्‌बुद्ध अवस्था में निरुक्त कहाता है ।

भाषा के वास्तविक स्वरूप और अर्थ को समझने की पद्धति को निर्धारित करने की व्यवस्था को ही वास्तव में निरुक्त कहा जाना चाहिए । निरुक्त की सम्पूर्ण शक्ति निर्वचन में सन्निहित रहती है । इसीलिए एक ही शब्द और पद प्रकरण-प्रसंग और धात्वर्थ आदि के आधार पर कई अर्थ स्पष्ट करते हैं । पद की सिद्धि के नियम बताना उसका निर्वचन कहाता है ।

इस आधार पर निरुक्त को वेदार्थ स्पष्ट करने में सहायक वेदाङ्ग समझना चाहिए और इसलिए निरुक्त का अध्ययन आवश्यक एवं अनिवार्य होना चाहिए । आज प्रत्येक भाषा के विकास के लिए भाषा-विज्ञान का अध्ययन किया जाता है । भाषा-विज्ञान की दृष्टि निरुक्त की भावना का ही अंग है । ●

www.thearyasamaj.org

पुस्तक समीक्षा–

प्रारम्भिक शिक्षा

लेखक–स्वामी शान्तानन्द सरस्वती, प्रकाशक– सन्त ओघवराम वैदिक गुरुकुल, भवानीपुर कच्छ, गुजरात, मूल्य-10.00 । विद्यार्थियों को ईश्वर भक्त, देशभक्त, गुरुभक्त, मातृ-पितृभक्त, धार्मिक चरित्रवान्, संस्कारवान्, बुद्धिमान् व विद्वान् बनाने हेतु इस पुस्तक का प्रणयन किया गया है । आवरण के द्वितीय पृष्ठ पर पूज्य स्वामी सत्यपति जी रोजड़ का विद्यार्थियों के नाम सन्देश दिया गया है । इससे पुस्तक की ग्रहणीयता में वृद्धि हुई है । सम्पूर्ण पुस्तक प्रश्नोत्तर रूप में है । शिष्यगणों को गुरुजी ने मानवधर्म का उपदेश दिया है । विशिष्ट महानुभावों का संक्षिप्त परिचय दिया है । महर्षि दयानन्द सरस्वती के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का परिचय दिया गया है । महर्षि दयानन्द सरस्वती के 51 मन्तव्यों का समाहार भी इस पुस्तक में है । जीवन जीने के स्वर्णिम नियम तथा प्रारम्भिक शिक्षा की महत्वपूर्ण बातें इस पुस्तक में है । यह पुस्तक वैदिक धर्म का सम्यक् ज्ञान कराती है । यह पुस्तक पठनीय एवं मननीय तथा व्यवहार्य है ।

पावमानी

वैदिक संहिताओं में सरस्वती का स्वरूप –प्रधान सम्पादक–स्वामी विवेकानन्द सरस्वती, सम्पादक-प्रो० सोमदेव सतांशु और डॉ० वाचस्पति मिश्र; प्रकाशक–स्वामी समर्पणानन्द वैदिक शोध संस्थान, गुरुकुल प्रभात आश्रम, टीकरी, भोलाझाल, मेरठ । पावमानी के इस अंक में स्वामी समर्पणानन्द शोध संस्थान द्वारा 'वैदिक संहिताओं में सरस्वती का स्वरूप' विषय पर संगोष्ठी आयोजित की गई । संगोष्ठी में विभिन्न विश्वविद्यालयों तथा शिक्षण संस्थाओं के विद्वानों ने भाग लिया । उनके द्वारा प्रस्तुत शोध लेख इस पत्रिका में संकलित है भारतीय वाङ्मय में ज्ञानप्राप्ति के लिए सरस्वती की उपासना वर्णित है । भारतीय मनीषा वेदों को स्वतः प्रमाण मानती है । वैदिक साहित्य में देवतावाद के सम्बन्ध में स्पष्ट निर्देश है कि एक ही परमात्म तत्व अपनी विभिन्न विशेषताओं के कारण विभिन्न नामों से जाना जाता है । प्रो० ज्ञानप्रकाश शास्त्री तथा प्रो० श्रीवत्स शास्त्री ने महर्षि दयानन्द सरस्वती के यजुर्वेद भाष्य को अपने शोध लेखों का आधार बनाया है । संस्थान के सभी अधिकारी इस प्रकार की विद्वदगोष्ठियों के आयोजन के लिए बधाई के पात्र हैं । शोध लेखों का संकलन-प्रकाशन श्रमसाध्य कार्य है । यह अंक पाठकों के लिए अति उपयोगी बन पड़ा है ।

www.thearyasamaj.org

गतांक से आगे–

महर्षि का ईश्वर प्रत्यक्ष

–स्व० आचार्य विश्वदेव शास्त्री

प्रत्यक्ष किसे कहते हैं :

"इन्द्रियार्थसन्निकर्षोत्पन्नं ज्ञानमव्यपदेश्यमव्यभिचारि व्यवसायात्मकं प्रत्यक्षम् । –न्यायदर्शन 1.1.4

यदिन्द्रियार्थसम्बन्धात्सत्यमव्यभिचारि ज्ञानमुत्पद्यते तत् प्रत्यक्षम्" ।

प्रत्यक्ष उसको कहते हैं जो चक्षु आदि इन्द्रिय और रूप आदि उनके विषयों का सन्निकर्ष (सम्बन्ध समीप्य) से सत्य ज्ञान हो । अव्यपदेश्य=अर्थात् संज्ञा संज्ञी सम्बन्ध ज्ञान से रहित हो । अव्यभिचारि=अव्याप्ति, अतिव्याप्ति आदि दोष से रहित, व्यवसायात्मक=निश्चयात्मक सत्य ज्ञान को प्रत्यक्ष कहते हैं । यहां छह प्रकार के सन्निकर्ष आदि के दार्शनिक लक्षणों में न जाकर साधारणतः लोक प्रचलित 'आंखों से देखे जाने वाले सत्य निश्चयात्मक' ज्ञान को ही प्रत्यक्ष कहने में क्या कठिनाई है ?

'ईश्वर इन्हीं आंखों से दर्शनीय है ।' बात बड़ी अटपटी है । सहज ही विश्वसनीय नहीं । यहां प्रसंगोपात्त प्रत्यक्ष का महर्षि दयानन्द का किया दूसरा अर्थ भी प्रस्तुत है । महर्षि दयानन्द ने ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के सृष्टिविद्या विषय में पुरुष सूक्त के मन्त्र व्याख्यान में कहा है–

यो देवेभ्यो आतपति यो देवानां पुरोहितः ।
पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रुचाय ब्राह्मये ।। यजु० 31.20

"(पूर्वो यो देवेभ्यो जातो) जो सब विद्वानों से आदि विद्वान् और जो विद्वानों के ही ज्ञान से प्रसिद्ध अर्थात् प्रत्यक्ष होता है । उस अत्यन्त आनन्द स्वरूप और सत्य में रुचि कराने वाले ब्रह्म को हमारा नमस्कार हो ।"

यहां महर्षि ने 'विद्वानों' के ही ज्ञान से प्रसिद्ध अर्थात् प्रत्यक्ष यह भी प्रत्यक्ष का अर्थ अतिपादित किया है ।

अधिकांश विद्वद्गण ईश्वर का प्रत्यक्ष अनुमान प्रमाण से ही सिद्ध करते हैं । यथा–क्षित्यङ्कुरादिकं सकर्तृकं कार्यत्वाद् घटवत् । पृथिवी, पेड़ आदि कर्ता (ईश्वर) के किये हुए हैं । कार्य होने से घड़े के समान जैसे घड़े को देखकर उसके कर्ता कुम्हार का ज्ञान होता है, वैसे ही विश्व को देखकर विश्व के रचयिता ईश्वर का भी बोध होता है ।

महर्षि ने सत्यार्थप्रकाश में अनुमान प्रमाण को दिया है– 'अथ तत्पूर्वकं त्रिविधमनुमानं पूर्ववच्छेषवत् सामान्यतो दृष्टं च ।।2।। इसका व्याख्यान भी किया है । यत्र लिङ्गज्ञानेन लिङ्गिनो ज्ञानं जायते तदनुमानम् ।' यह भी अनुमान का लक्षण है ।

अब यदि विचारा जाये तो अनुमान प्रमाण भी प्रत्यक्ष मूलक ही है । यथा धूम को देखकर अग्नि का ज्ञान होना । पुत्र को देखकर पिता का ज्ञान होना आदि । (क्रमशः)

www.thearyasamaj.org

गतांक से आगे–

आर्यसमाज का दायित्व

–स्व० युद्धवीर

गत दिनों आंध्रप्रदेश के कारमचेडू ग्राम में क्या हुआ ? सबने देखा किन्तु कोई कुछ नहीं कर सका । आर्थिक दृष्टि से संरक्षणों और हुकूमत के कुछ कार्यक्रमों के कारण इन हरिजनों में एक नया वर्ग पैदा हो गया है, जिनके पास पैसा है और समाज में प्रतिष्ठित स्थान भी । हरिजनों के इस वर्ग वालों की संख्या बहुत कम है । इस वर्ग ने भी गरीब हरिजनों का शोषण आरम्भ कर दिया है । हरिजनों के लाभ के लिए हुकूमत की ओर से जितने भी संरक्षणवादी और अन्य कार्यक्रम हैं, उन सब का लाभ हरिजनों का यही वर्ग विशेष उठाता है । सरकार के रिकार्ड में तो यह आ जाता है कि उसने इतने हरिजनों को नौकरियां, इतने को कर्जे दिए और इतनों के लिए मकान बनाए । किन्तु यह सब कुछ वास्तव में हरिजनों के उस वर्ग विशेष को मिलता है जिन्हें समाज में हम पिछड़ा हुआ नहीं कह सकते । सरकार अपने नियम और कानून पूरे कर लेती है किन्तु हरिजनों में जो पिछड़ा हुआ वर्ग है, उसे कोई लाभ नहीं पहुंचता । इसी प्रकार अन्य सामाजिक कार्यक्रम हैं जिनमें विधवा विवाह, दहेज प्रथा, अनाथालय, शिक्षा का प्रसार आदि शामिल हैं । इन सब कार्यक्रमों की भी अछूतोद्धार कार्यक्रम जैसी ही दुर्दशा हो रही है । आज भी भारत में लाखों विधवाएं हैं, बाल विवाह पर प्रतिबंध होने के बावजूद उनमें कितनी ही बाल विधवाएं भी हैं । दहेज प्रथा तो प्रतिदिन भारत में दर्जनों नारियों का जीवित दाह-संस्कार कर रही है । अनाथालयों में अनाथों की जो दुर्दशा है वह किसी से छिपी हुई नहीं । शिक्षा के प्रसार में अरबों रुपया अवश्य खर्च होते हैं । फिर भी निरक्षरों की संख्या ही अधिक है । इन सब का विवरण लिखना सम्भव नहीं । मेरा यह सब लिखने का तात्पर्य केवल यह है कि आर्यसमाज ने जो समाज-सुधार के कार्यक्रम आरम्भ किए थे, उन्हें सरकार ने अपना कार्यक्रम बना तो लिया, किन्तु इसका मतलब यह नहीं कि आर्यसमाज का काम पूरा हो गया । सरकार अपना काम करती रहेगी, आर्यसमाज को एक समाज-सेवी संस्था के रूप में अपना काम करते रहना चाहिए था । *(क्रमशः)*

प्रकाशक-मुद्रक-स्वामी-मूलचन्द गुप्त द्वारा सम्पादित, तथा वैदिक प्रेस, 995/51, गली नं०17, कैलाशनगर, दिल्ली-31 (फोन-22081646) से मुद्रित कराकर, ओम् प्रतिष्ठान, कुसुमालय, बी-1/27, रघुनगर, पंखा रोड, नई दिल्ली- 45, से प्रकाशित किया । न्यायक्षेत्र–दिल्ली ।